ResearchPro International Multidisciplinary Journal

Vol- 1, Issue- 2, October-December 2025 ISSN (O)- 3107-9679
Email id: editor@researchprojournal.com Website- www.researchprojournal.com

चित्रा मृद्गल का रचना संसार

जिज्ञांशु पाठक

शोधार्थी, हिन्दी, जनता इण्टर कॉलेज बोहिच मीरापुर, बुलंदशहर (उ0प्र0)

प्रो0 (डॉ0) शैलेन्द्र कुमार राव

शोध निर्देशक, प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग, संत विनोवा पी.जी. कॉलेज, देवरिया (उ0प्र0)

सारांश

चित्रा जी की लेखनी को उपन्यास, कहानी तथा लघुकथा इन तीनों विधाओं पर सफलतापूर्वक अधिकार प्राप्त है। अपने लेखन को महिलापन से बचाते हुए उन्होंने अपने उपन्यास तथा कहानियों में वर्गीय सीमाओं का अतिक्रमण कर निम्न वर्ग के पक्षधर रचनाकार के रूप में अपनी पहचान बनाई है। फलस्वरूप उनका साहित्य महानगरीय तथा ग्रामीण अहसासों का सजीव साहित्य बन गया है। महानगरों में पनप रही झोपड़पट्टियों तथा ग्रामों में पनप रही गरीबी, अशिक्षा, शोषण, अंधविश्वास आदि समस्याओं के चित्रण में चित्रा जी की मजबूत पकड़ है। साथ ही घर, परिवार तथा अपने आस–पास की जिन्दगी से संलग्न सभी छोटी–मोटी आशा–आकांक्षाओं को वहन करने वाले पात्रों की सृष्टि उनकी साहित्यिक विशेषता है। आजकल सामान्यतः हर महिला लेखिका के साहित्य पर स्त्रीवादी साहित्य होने का ठप्पा लगाया जाता है, मानों उन्होंने विषय का विभाजन ही कर लिया हो कि हम केवल स्त्रियों के जीवन पर ही साहित्य रचेंगे, लेकिन चित्रा जी का साहित्य इस ठप्पे से अछूता है। इसका कारण यह है कि उनका साहित्य न स्त्री–केन्द्री है, न पुरुष–केन्द्री, बल्कि वह तो मानव–केन्द्री है। उनकी समस्त रचनाएँ मानवीय संवेदनाओं, सम्बन्धों, रिश्तों, जन–चेतना जागृति, महिला सबलीकरण एवं साक्षरता, सामाजिक न्याय, अभिजात्य एवं सामंतवादी वर्ग के दमन, शोषण, भ्रष्टाचार के विरुद्ध संघर्ष का प्रतिनिधित्व करती हैं। उनके साहित्य में समाज के कमजोर वर्गों, दलित वर्गों तथा नारी वर्ग के प्रति जो संवेदना एवं सहानुभूति मिलती है, वह प्रशंसनीय है। उसमें ग्रामीण–शहरी यह भेद नहीं है। अमीर, गरीब, नौकरीपेशा, व्यवसायी, किसान, मजदूर, बेरोजगार, महलवासी, झोपड़पट्टी निवासी सभी उनके साहित्य के विषय हैं। उनके कथा साहित्य में विषयों, पात्रों, समस्याओं की इतनी विविधता है, कि जिसके कई आयाम निरूपित किए जा सकते हैं।

की–वर्डः गरीबी, अशिक्षा, शोषण, अंधविश्वास, सामाजिक न्याय, भ्रष्टाचार के विरूद्ध संघर्ष।

प्रस्तावना

आधुनिक हिन्दी कथा साहित्यकारों में चित्रा मुद्गल का विशिष्ट स्थान रहा है। आपका जन्म 10 दिसम्बर, 1944 को सामंती परिवेश के गाँव निहाली खेड़ा, जिला उन्नाव, उत्तर प्रदेश के एक सम्पन्न ठाकुर परिवार में हुआ। उनके दादाजी का नाम ठाकुर बजरंग सिंह तथा दादी का नाम रामराजी कुँवर था। वे अमेठिहन ठाकुरों की बेटी थीं। उनके पिताजी के दो भाई तथा चार बहनें थीं। सबसे बड़े ताऊजी ठाकुर लाल बहादुर सिंह, मँझले उनके पिता ठाकुर प्रताप सिंह तथा छोटे चाचा अम्बिका प्रसाद। चित्रा जी के चार बुआएँ थीं– सबसे बड़ी बुआ कुनान, मँझली बीट, फिर बिटालू और सबसे छोटी बुआ बिट्टी थी। उनकी माता का नाम विमलादेवी था जो प्रतापगढ़ के बयालीस गाँव के ताल्लुकेदार ठाकुर देवराज कुँवर की बेटी थीं। चित्राजी के पिता भारतीय नौसेना में अधिकारी थे। उनका तबादला प्रायः मुम्बई, चेन्नई, विशाखापट्टनम्, गोवा आदि स्थानों पर होता रहता था। सभी

जगह वे अपने परिवार के साथ जाते थे। चित्रा जी का जन्म चेन्नई में हुआ पिताजी के साथ अनेक स्थानों में रहने के कारण जीवन का उनका अनुभव बढ़ता गया और उन्हें देश के अलग–अलग हिस्सों के लोगों की जिन्दगी और समस्याओं को समझने का अवसर मिला। उनके पिता साहसी व्यक्ति थे। शिकार उनका शौक था। किसी की इच्छाओं तथा भावनाओं को समझना उनकी प्रकृति में नहीं था। अतः वे हमेशा अपनी ही चलाते थे। उनकी माँ सीधी–सादी, घर में ही पढ़ी–लिखी घरेलू महिला थीं। पर उनके माता–पिता में मेल नहीं था। चित्राजी के अनुसार– ''माँ के साथ उनके पिताजी का व्यवहार असंतोषजनक था।'' परिणामतः चित्रा जी का जहाँ माँ के प्रति लगाव बढ़ा, वहीं पिता के प्रति उनके मन में विद्रोह ने जन्म लिया। परन्तु उनके पिता का भी एक अनजाना रूप था जिसका पता चित्रा जी को बहुत बाद में चला। वे कहती हैं ''पिता की मृत्यु के बाद मुझे एक रजिस्टर प्राप्त हुआ जिसमें हिन्दी में एक नाटक लिखा हुआ था। अंग्रेजी में रोमांटिक कविताएँ करना, दूसरों परप्रेम करना उनकी कमजोरी थी। उनके कठोर, दुस्साहसी, आकर्षक, रोबीले व्यक्तित्व का यह संवेदनशील रचनात्मक पक्ष मेरे लिए सर्वथा अनजाना था।''

चित्रा मुद्गल की शैक्षिक योग्यता उत्कृष्ट रही है। आप पिता जी के साथ शहर में रहते हुए भी गाँव से बराबर सम्बद्ध रहीं। उनकी दूसरी, तीसरी तथा चौथी कक्षा की पढ़ाई गाँव में ही हुई। गाँव का वातावरण उनके शिशुमन को बराबर प्रभावित करता रहा। उनके घर का वातावरण सनातनी तथा सामंती था। घर में लड़कियों तथा स्त्रियों को बहुत ही सीमित स्वतंत्रता थी। स्त्रियों का घर से बाहर निकलना, किसी से बातें करना आदि पर कड़ा प्रतिबन्ध ा था, परन्तु पुरुषों पर कोई बन्धन नहीं था, उनके लिए सब कुछ मुक्त था।

(क) व्यक्तित्व एवं कृतित्व

शिक्षाः चित्रा जी की प्रारम्भिक शिक्षा अर्थात् प्रथम कक्षा की पढ़ाई विलेपार्ले मुम्बई के सेंट्रल स्कूल में सन् 1952–53 में हुई। दूसरी, तीसरी तथा चौथी कक्षा की पढ़ाई निहाली खेड़ा की कन्या पाठशाला में हुई। निहाली खेड़ा में पढ़ते समय चित्रा जी के शिशु मन ने देखा कि उनके घर में काम करने वाले निम्न वर्ग के लोग उनके घरवालों द्वारा कैसे शोषित–पीड़ित हैं। इसी शोषण से संबंधित एक घटना उनके सामने घटित हुई, (इस घटना का उल्लेख आगे किया गया है) जिससे चित्रा जी के बालमन को गहरी ठेस पहुँची। इस कारण उनका मन गाँव से उचट गया। उन्होंने अपने पिताजी को पत्र लिखकर अपने साथ ले जाने का आग्रह किया। पाँचवीं कक्षा से आगे की पढ़ाई दोबारा मुम्बई में प्रारम्भ हुई। घाटकोपर मुम्बई के हिन्दी हाईस्कूल में वे उन दिनों पढ़ा करती थीं। स्कूल में वे नृत्य की ओर आकर्षित हुई।

अपने पिता के विरोध के बावजूद वे अपने रुचिनुसार नृत्य सीखती रहीं। इतना ही नहीं, गणेशोत्सव जैसे अवसरों पर रंगमंच पर कार्यक्रम भी करती रहीं। उसके बाद चित्रा जी ने सन् 1963 में मुम्बई के सोमैया कॉलेज में इंटरमीडिएट की पढ़ाई पूरी की। इंटरमीडिएट के पश्चात् चित्रा जी ने अपनी रुचिनुसार सन् 1966 में मुम्बई के जे.जे. स्कूल ऑफ फाइन आर्ट्स संस्था में चित्रकला में डिप्लोमा किया। उनके पिता को उनका चित्रकला सीखना भी पसन्द नहीं था। चित्रा जी को यदि नृत्य और चित्रकला में रुचि थी, तो उनके पिता उन्हें बन्दूक चलाना तथा घुड़सवारी करना सिखाना चाहते थे। उन्होंने सिखाने का प्रयास भी किया, पर चित्रा जी ने उनकी इच्छा आकांक्षाओं पर पानी फेर दिया। बन्दूक चलाना तो वह सीख नहीं पाई। घुड़सवारी सीखीं भी तो घोड़े से गिरकर माथा, आँख और घुटना चोटिल होने के बाद इन्होंने शिक्षा के क्षेत्र में विशेष ध्यान दिया।

विवाह एवं जीविका चलाने के लिए संघर्षः चित्रा जी का विवाह 'सारिका' के सम्पादक तथा साहित्य में गहरी रुचि रखने वाले अवधनारायण मुद्गल से हुआ। उनकी प्रथम भेंट भी बड़े नाटकीय ढंग से हुई और दोनों ने प्रेम–विवाह कर लिया। अवधनारायण ब्राह्मण थे और चित्रा जी ठाकुर। अतः घर के सनातनी परिवेश में चित्रा के घरवालों को यह विवाह स्वीकार्य नहीं था। परन्तु चित्रा ने साहस के साथ पिता का घर छोड़ दिया और अवधनारायण जी से परिणय सूत्र में बँध गई। विवाह के बाद चित्रा जी को घर छोड़ना पड़ा। ससुराल में उनको आर्थिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। क्योंकि उनके ससुराल वाले सम्पन्न नहीं थे। अतः उनको घर चलाना भी दूभर हुआ। ''इस समय वे भांडुप की झोपड़पट्टी में एक अति मामूली चाल में आठ–बाई–आठ के कोठरीनुमा कमरे में रहते थे। जिसमें बिना आड़ की मोरी जरूरत पड़ने पर स्नानघर में परिवर्तित कर ली जाती थी। और चाली के अन्य सदस्यों की भांति तड़के उठकर चाली के एकमात्र शौचालय में लाइन लगाकर अपनी बारी की प्रतीक्षा में खड़ा होना पड़ता था।'' आर्थिक तंगी के कारण अवधनारायण मुद्गल ने कविताएँ और कहानियाँ लिखना छोड़कर कई एजेन्सियों में विज्ञापन लिखना शुरू किया और चित्रा जी ने अनुवाद।

पारिवारिक जीवनः चित्रा जी के इस निरन्तर संघर्षमय जीवन में कुछ संतोष के क्षण भी आए। ज्येष्ठ पुत्र राजीव के लगभग पाँच वर्ष बाद कनिष्ठ पुत्री अपर्णा का जन्म हुआ। उनके बच्चे पढ़ाई में तेज थे, साथ ही चित्रा तथा अवधनारायण भी उनकी शिक्षा के प्रति सजग थे। चित्रा जी तथा अवधनारायण जी साहित्यप्रेमी तथा साहित्यकार हैं ही, उनका बेटा भी इस दिशा में पीछे नहीं रहा। राजीव मुम्बई में कम्प्यूटर इंजीनियर हैं। वह भी एपिक, कविताएँ तथा नाटक आदि लिखता है। चित्रा जी का प्रारम्भिक पारिवारिक जीवन आर्थिक कठिनाइयों का सामना करते बीता, परन्तु बाद में स्थिति अच्छी हो गई। उनकी माँ के शब्दों में कहा जाए तो ''बहुत ही आराम से जिन्दगी बीत रही है।'' चित्रा जी को जीवन के विभिन्न मोड़ों पर संघर्ष करना पड़ा है, कष्ट झेलने पड़े हैं। उनके प्रशांत चेहरे के पीछे अथाह वेदना छिपी है, पर संघर्ष की कड़ियाँ अभी टूटी नहीं। कुछ ही दिन पूर्व कार दुर्घटना में उनकी पुत्री अपर्णा की मृत्यु हो गई और उन पर दुःख का पहाड़ टूट पड़ा।

विचारधाराः चित्रा जी पर साहित्यिक दृष्टि से गोर्की, टालस्टॉय, इलियट, हेमिंग्वे, प्रेमचन्द, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, महात्मा गाँधी आदि का प्रभाव है। उनमें महात्मा गाँधी के My Experiment with Truth तथा गोर्की के 'माँ' का विशेष प्रभाव है। उनके अनुसार साहित्य मनुष्य को समूचे विश्व के साथ जोड़ देता है। राजनीतिक दृष्टि से चित्रा जी एक कार्ल मार्क्स की विचारधारा का प्रभाव है।2 परन्तु चित्र जी मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी की कार्ड होल्डर नहीं बनीं। उनके अनुसार किसी राजनीतिक पार्टी का कार्ड होल्डर बनना उस पार्टी के राजनीतिक और सामाजिक विचारधारा को बिना किसी आशंका के स्वीकार करना है। पार्टी के नाम पर कुछ आदमी विहप जारी करें और सब लोग उसको फॉलो करें, यह एक प्रकार से निरंकुशतावाद ही है और मन के विपरीत किसी बात का केवल इसलिए समर्थन किया जाए कि वह पार्टी का आदेश है, यह उनके मन ने स्वीकार नहीं किया। फिर भी मार्क्स के प्रति उनकी भक्ति है। उनके अनुसार मार्क्सवादी विचारधारा के प्रकाश में आप सर्वहारा को भली–भाँति समझ सकते हैं। राजनीतिक पार्टी की दृष्टि से वे काँग्रेस से भी काफी प्रभावित हैं। उनका कहना है कि ''काँग्रेसी मध्यममार्गी हैं और मार्क्स उनका दिमाग है।'' काँग्रेस पार्टी की ओर से उन्हें उत्तर प्रदेश की विधानसभा चुनाव के लिए टिकट भी मिल सकता था परन्तु उन्होंने यह निश्चित किया कि राजनीतिक पार्टी से सम्बद्ध हुए बिना भी सामाजिक कार्यों में हिस्सा लिया जा सकता है। इसलिए वे 'स्वाधार' तथा 'जागरण' जैसी सामाजिक संस्थाओं से जुड़ गई। उनके अनुसार, ''राजनीति में रहकर आप एक पार्टी की तरह सोचने लगती हैं, उसके एजेंडे आपके क्रायटेरिया हो जाते हैं लेकिन आप सोशल कामों में रहते हैं तो हर पार्टी, हर व्यवस्था, हर व्यक्ति, हर तबके का व्यक्ति–चाहे डॉक्टर हो, इंजीनियर हो, पुलिस हो, चोर हो, अपराधी हो सबके सब लेखक का विषय बन जाते हैं।'' चित्रा जी डॉ. राममनोहर लोहिया की विचारधारा से भी काफी प्रभावित हैं।

साहित्यकार की रचनाओं का प्रेरक तत्त्व उसका अन्तःकरण होता है। अपने बचपन की कुछ घटनाएँ चित्रा जी के मन में अविस्मरणीय रूप में अंकित हैं। उन घटनाओं के कारण ही चित्रा जी में विद्रोह की प्रवृत्ति बचपन से ही पनपने लगी थी। जैसा कि ऊपर संकेत किया जा चुका है, चित्रा की दूसरी, तीसरी और चौथी कक्षा की पढ़ाई गाँव में ही हुई थी। उस समय चित्रा के घर में लड़कियाँ तथा स्त्रियों को बहुत सीमित स्वतंत्रता थी। घर के मुख्य दरवाजे से आना–जाना तक मना था। नन्ही चित्रा को यह सब पसन्द नहीं था। चित्रा की सहेलियाँ स्कूल जाने के लिए बाहर आकर खड़ी रहती थीं और अबोध चित्रा भी मुख्य दरवाजे से ही स्कूल जाती थी। उसका यह आचरण घर की परम्परा से विपरीत था। दादी ने पोती को समझाने का प्रयास भी किया पर दादी के समझाने पर भी चित्रा मुख्य दरवाजे से ही दौड़ती हुई निकल जाती थी। उन्हें अभी भी याद है कि उनकी इस हरकत के लिए ताऊ ने उन्हें पीटा भी था और अपने भाई से कहा था, ''बेटी को कंट्रोल में रखो। किसी दिन नाक कटा दोगी।''

निहाली खेड़ा का एक और प्रसंग चित्रा जी नहीं भूल पाती हैं। एक बार एक बोरी गहूँ चुराने पर उनके घर में काम करने वाले भीखू को उनके ताऊ जी ने नीम के तने से बाँधकर हंटर से इतना पीटा था कि उसकी देह लहूलुहान हो उठी थी। तने से बँधी उसकी देह आर्तनाद के साथ कसमसाने लगी थी। भीखू के माता–पिता ने ताऊ जी की क्षमा माँगी, उसकी बड़ी और छोटी बहन ने उनके पैरों पर माथा टेक दिया, फिर भी ताऊ जी का मन नहीं पसीजा। मार खा–खाकर भीखू की गर्दन बँधी देह पर एक ओर लुढ़क गई थी। इस दर्दनाक दृश्य को चित्रा ने स्वयं देखा है। तब वह बच्ची थी। यह दृश्य देखकर वह डर गई थी। बस! तभी से उसके मन में विद्रोह का भाव पैदा हुआ। वह सोचती है ''जब वे मेरे जैसा ही है, फिर इसे जो खाना दिया जाता है वह इतना कम क्यों होता है कि उसे अनाज की चोरी करनी पड़ती है?

आपकी रचनाओं में समाजसेवा का भी भाव विद्यमान है। अतएव आपने रचना के प्रेरक तत्वों में समाज को विशिष्ट स्थान दिया है। चित्रा जी साहित्य–साधना करते हुए अनेक सामाजिक संस्थाओं के साथ जुड़कर सामाजिक कार्य में संलग्न हैं। उनके सामाजिक कार्य का स्वरूप वह नहीं जिसमें मंच पर खड़े होकर भाषण अथवा बड़े–बड़े नारे लगाए जाते हैं। चित्रा जी ने झोपड़पट्टी की जीवनानुभूतियों को जिया है। अतः वे उस जीवन की समस्याओं से भली–भाँति परिचित हैं। 'जागरण' के लिए काम करते हुए चित्रा जी ने अपने इर्द–गिर्द फैली झोपड़पट्टी के अविश्वसनीय लगते नरक सदृश्य जन–जीवन के सम्पर्क में आई। ''उन घरों के सम्पर्क में आई जो भीख, पॉकेटमारी, चोरी, देह–व्यापार, दारू, साग–सब्जी, ड्रायव्हरी, फेरी, सिनेमा के टिकटों के कालाबाजार पर आश्रित एक जून रोटी का जुगाड़ करते हुए दूसरे रोज के लिए साँसों की मुहलत माँगते।'' उनके जीवन को करीब से देखते हुए चित्रा जी को ''हर पल लगने लगा कि उनके हाथ में तीली क्यों न हुई जो वोटों की दलाली और शोषण के कंधों पर सवार व्यवस्था को भस्म कर दे और सब को जीने का हम दिला सके।' चित्रा जी 'जागरण' तथा 'स्वाधार' के साथ–साथ 'मध्य प्रदेश महिला मंच' में 'एकता सहेली' के रूप में सक्रिया कार्यकर्त्री रहीं।

(ग) चित्रा मुद्गल का कथा साहित्य

चित्रा मुद्गल का समग्र कथा साहित्य अत्यधिक लोकप्रिय हुआ है। चित्रा जी के उपन्यासों का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत है –

(1) आवांः

चित्रा जी का आवां उपन्यास अत्यधिक लोकप्रिय हुआ है। इसमें श्रमिक आन्दोलन के अन्तर्विरोध तथा नारी उत्पीड़न की गाथा वर्णित हुयी है। इस उपन्यास के आरम्भ में ट्रेड यूनियन, मजदूर आन्दोलन एवं स्त्री विमर्श को केन्द्र में रखकर बीसवीं सदी के अन्तिम दशक की महत्त्वपूर्ण घटनाओं का चित्रण किया गया है। यह उपन्यास मजदूर संगठन जो कभी पूँजीवादी व्यवस्था से लड़ने के लिए बने थे, कैसे पूँजीपतियों के हाथों बिक गए हैं, इसका यथार्थ अंकन करता है। साथ ही महानगरीय जीवन में निम्न मध्यवर्गीय महिलाओं की आर्थिक दुर्दशा और यौन शोषण का बेबाक चित्रण उपन्यास के विषय को विस्तार देता है। 'आवां' में मुम्बई में मजदूर संगठनों के संघर्ष की धार कुंद होने तथा आधुनिक समाज में स्त्री की वास्तविक स्थिति, उसकी यातना, उत्पीड़न की दो कथाएँ हैं। साथ ही लेखिका ने इसमें कामकाजी महिलाओं की समस्याओं को बड़े सुन्दर ढंग से उठाया है। स्त्री को घर से बाहर निकलने एवं गंतव्य स्थल तक पहुँचने के बीच तरह–तरह के पुरुष अत्याचारों के दंश से गुजरना पड़ता है। चित्रा जी का यह उपन्यास सदियों से शोषित–पीड़ित मजदूरों, उनके आन्दोलनों तथा स्त्री संघर्ष को उजागर करता है।

आवां मुम्बई की पृष्ठभूमि पर अंकित है। मजदूरों के हित में महासमर्पित नेता अन्ना साहब के दाहिने हाथ तथा ''कामकार आघाड़ी'' के महासचिव देवीशंकर पांडे पर विरोधी छुरे से हमला करते हैं। कुछ समय बाद यह लकवे का शिकार हो जाते हैं और बिस्तर पर पड़े रहने को अभिशप्त हो जाते हैं। कनिष्ठ पुत्री मुनिया और पुत्र छुन्नू छोटे हैं। ज्येष्ठ पुत्री नमिता, जो उपन्यास का केन्द्रीय पात्र हैं– की पढ़ाई छूट जाती है। मजदूर यूनियन 'कामगार आघाड़ी' के प्रमुख अन्ना साहब उसे यूनियन कार्यालय में नौकरी देते हैं परन्तु बाद में उनके अनपेक्षित, विकृत कामुक आचरण के कारण वह नौकरी छोड़ देती है। एक ओर अन्ना साहब का विराट व्यक्तित्व और दूसरी ओर उसकी अपरिपक्व अवस्था। प्रतिरोध करने की स्थिति में वह स्वयं को न पाकर उनके रास्ते से दूर हट जाना ही बेहतर समझती है। नमिता अपनी माँ के साथ 'श्रमजीवा' संस्था में पापड़ बेलने के काम पर जाने लगती है, घर पर फाल लगाने का भी काम करती है, पर काम उसे पसंद नहीं। माँ उसके साथ सौतेला व्यवहार करती है और उसे अपमानित और प्रताड़ित करने का एक भी अवसर हाथ से जाने देना नहीं चाहती। बस उसके पास लकवे से पीड़ित पिता के स्नेह और सहानुभूति का ही सम्बल है।

लोकल ट्रेन की यात्रा के दौरान एक दिन अचानक नमिता की मुलाकात एक भद्र महिला अंजना वासवानी से होती है। आभूषणों का व्यापर करने वाली यह महिला नमिता को नौकरी देती है, जिसमें लिपिकीय कार्य के साथ–साथ आभूषणों की माडलिंग भी करनी होती है। इस काम के लिए वह नमिता को ऊँचा वेतन देती है, महँगे उपहार प्रदान करती है और आभूषण डिजाइनिंग के विशेष पाठ्यक्रम हेतु हैदराबाद भेजती है। इसी दरमियान नमिता के पिता की मृत्यु हो जाती है।

मैडम वासवानी के यहाँ नौकरी करते हुए नमिता धनाढ्य आभूषण व्यापारी संजय कनोई के सम्पर्क में आती है। वह विवाहित पर निःसंतान कनोई के प्रेमजाल में फँसती है, जिसकी परिणति उसके गर्भवती होने में होती है। हैदराबाद के प्रशिक्षण के दौरान अन्ना साहब की हत्या का समाचार सुनकर उसका गर्भपात हो जाता है और यह जानकर संजय कनोई आग बबूला हो जाता है। वस्तुतः वह कुँवारी सुन्दरी नमिता से संतान पाने का इच्छुक था। आहत नमिता पाठ्यक्रम अधूरा छोड़कर मुम्बई वापस आ जाती है। वह अपनी माँ के साथ न रहकर मजदूर किशोरीबाई के साथ रहती है और 'कामगार आघाड़ी' के लिए काम करने का निर्णय करती है। इस प्रकार एक मजदूर की बेटी का शुरू में मजदूर राजनीति से मोहभंग होता है और वह सुविधाभोगियों की दुनिया में कदम रखती है, परन्तु वहाँ की हालत और भी ज्यादा बदतर पाकर पुनः मजदूरों के बीच काम करने का मन बनाती हैं नमिता का चरित्र संघर्षशील, महत्त्वाकांक्षी, आधुनिक और वर्जनामुक्त मूल्यों के प्रति सचेत युवती के रूप में उभरा है।

उपन्यास में कई कथाएँ, उपकथाएँ और चरित्र हैं। एक महत्त्वपूर्ण चरित्र स्पष्टवादी, मुँहफट, कड़क मिजाज, सहायता के लिए तत्पर और प्रतिबद्ध मजदूर नेता पवार का है, जो अनुसूचित जाति से सम्बन्धित है। नमिता का उसके प्रति दैहिक आकर्षण है, वह भी नमिता से विवाह करने को इच्छुक है, पर परिस्थितियाँ ऐसी होती हैं कि दोनों का मिलन नहीं हो पाता। नमिता की माँ अपनी छोटी बहन कुन्ती की समृद्धि से इतना आक्रांत रहती है कि अपने बच्चों से अधिक महत्त्व उसके परिवार को देती है। गाँधीवादी, समाजसेविका और सादगी की प्रतिमूर्ति शाहबेन 'श्रमजीवा' संस्था का संचालन करती है, जिसमें शोषित, प्रताड़ित और जरूरतमंद स्त्रियाँ पापड़ बेलकर दो जून की रोटी का जुगाड़ करती हैं। मजदूर किशोरी बाई की पुत्री सुनंदा का मुस्लिम प्रेमी सुहैल से सामप्रदायिक कट्टरता के कारण विवाह नहीं हो पाता और सुनंदा अविवाहित स्थिति में पुत्री को जन्म देती है। बात यहीं समाप्त नहीं होती, सुनंदा की बाद में हत्या हो जाती है। नमिता की घरवाली बिल्डिंग में करमरकर आंटी की बेटी ममता आई.पी.एस. हो गए प्रेमी द्वारा धोखा खाने पर ड्रग्स लेने लगती है। दिन–रात शराब में धुत रहने वाला मटका किंग मदन खत्री अपनी बड़ी बेटी के साथ दुराचार करने से भी नहीं हिचकता। उसकी छोटी बेटी स्मिता नमिता की सहेली है और दूषित पारिवारिक वातावरण से इस कदर आहत होती है कि एक दिन चुपके से पिता को सीढ़ियों से धक्का दे देती है, जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु हो जाती है। उपन्यास में बीच–बीच में हर्षा प्रकट होती रहती है जो वस्तुतः नमिता की कल्पित छाया है, जिसके साथ हुए संवाद नमिता के अन्तर्द्वन्द्व को रेखांकित करते हैं।

पाँच–सौ चवालीस पृष्ठों के विशाल कलेवर का 'आवां' उपन्यास मजदूर राजनीति के अंतर्विरोध, आपसी वैमनस्य, प्रतिद्वन्द्विता और आपराधिकता को ही नहीं, पूँजीपति वर्ग के शोषण, छल–छद्म, और निकृष्ट हथकंडों को भी बेबाकी से अनावृत्त करता है। इस उपन्यास के माध्यम से मजदूर आन्दोलन की सीमाओं को सहज ही समझा जा सकता है। यह उपन्यास नारी सरोकारों के प्रति सतर्क चिंता और संवेदनशील दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण है। नारी के बहुविध उत्पीड़न का यह दस्तावेज है। 'आवां' वास्तविकता की भूमि पर टिका, देखे–सुने, जाने–बूझे पात्रों से युक्त उत्कृष्ट कोटि का उपन्यास है। इसके कथानक में पाठक को बाँधे रखने की सामर्थ्य हैं व्यापक अनुभव के आवे में पकाए जाने के कारण उपन्यास मजदूर आन्दोलन तथा नारी शोषण के वर्तमान सन्दर्भों का यथार्थ अभिलेख बन गया है। इस प्रकार आवां उपन्यास में कई कथाएँ, उपकथाएँ एवं चरित्र चित्रण इसकी चारुता पर चार–चाँद लगाते हैं। यह उपन्यास पाठक को सर्वथा समाकृष्ट करने में पूर्ण सक्षम है।

(2) एक जमीन अपनी

एक जमीन अपनी उपन्यास में विज्ञापन की दुनिया में अपनी जमीन की तलाश में स्त्री का चित्रण हुआ है। 'एक जमीन अपनी' चित्रा जी का 1990 में प्रकाशित प्रथम उपन्यास है जो मध्यवर्गीय कामकाजी महिलाओं की अस्मिता की सफल–असफल तलाश की विभीषिका को यथार्थ रूप में उघाड़ता है। ''प्रस्तुत उपन्यास अपने कथ्य में इतना संश्लिष्ट है कि उसे केवल महिला–लेखन के सीमित अनुभव वृत्त का उपन्यास नहीं कहा जा सकता अपितु वह एक ऐसे पुरुष प्रधान समाज और उसके विशिष्ट क्षेत्र का परिचय देता है, जिसके केन्द्र में नारी है।''

अंकिता को केन्द्रित कर और मॉडलिंग की दुनिया पर लिखे गए इस उपन्यास में एक स्वाभिमानी स्त्री के यथार्थ जीवन के कटु एवं भीषण संघर्षमय पक्ष को उजागर किया गया है। घर वालों के विरोध के बावजूद प्रेम–विवाह करने वाली अंकिता पति सुधांशु के असह्य व्यवहार से त्रस्त है। उसे अहसास होता है कि पति के

घर में वह महज एक नौकरानी बनकर रह गई है, उसे लगता है, ''मै सिर्फ गृहिणी नहीं हूँ . .. .एक स्त्री भी हूँ . . . . आखिर सुबह से रात के बीच कोई एक क्षण ऐसा नहीं हो सकता, जिसे मैं नितांत अपने लिए जी सकूँ . . . कागज कलम लेकर बैठ सकूँ। जो पढ़ना चाहती हूँ, पढ़ सकूँ . . . लिखना चाहती हूँ लिख सकूँ'' पर पति से उसे निराशा ही मिलती है क्योंकि सुधांशु को लगता है, ''यह मेरा घर है . . . और यहाँ तख्ती वही लटकेगी, जैसी मैं चाहूँगा . . . और सुधांशु ने उसकी कविताओं की कॉपी चिथड़े–चिथड़े कर कूड़ेदान में फेंक दी थी। वह फटी–फटी आँखों से उन चिथड़ों को घूरती रह गई थी. . . उसे लगा था, यह कविता की कॉपी के चिथड़े नहीं हैं, उसके 'स्व' को चिंदी चिंदी कर कूड़ेदान में फेंक दिया गया है और अब वह अपने होने को अधिक अनदेखा नहीं कर सकती।'' अंकिता उससे रिश्ता तोड़कर अपने पैरों पर खड़े होने का कठोर संकल्प करती है। अंकिता विज्ञापन जगत में अपना करियर बनाने का प्रयास करती हैं मुम्बई जैसी चकम–दमक, अपराध ओर सेक्स के तांडव की नगरी में विज्ञापन फिल्मों के चक्रव्यूह में फँसकर भी किस प्रकार अपने अस्तित्व, चरित्र को बचाकर रहा जा सकता है, इसके लिए कितने संकट झेलने पड़ते हैं, कैसी–कैसी अग्नि परीक्षाएँ देनी पड़ती हैं, मनुष्य रूपी कैसे–कैसे खूँख्वार भेड़ियों से जूझना पड़ता है, अंकिता इसका आदर्श स्थापित करती हैं घर में वह अपने पति से टकराती है, अपने मायके में भैया, भाभी और माँ की रूढ़िवादिता से। माँ की मृत्यु के बाद मायके में पारिवारिक सम्पत्ति के अपने हिस्से को त्यागकर उससे सम्बन्धित कलह से उबरती है। विज्ञापन फिल्मों की अपने सहयोगी हीरोइन नीता को उसकी धनलोलुप प्रवृत्ति के लिए लताड़ती है, जिसके कारण नीता यौन शोषण का शिकार बनी है। अंकिता कला निर्देशकों की कामुकता, उनके द्वारा किए जाने वाले यौन शोषण का प्रतिकार करती है। कला के नाम पर इस देहभोग का घोर विरोध करती है। वह जानती है कि ''विज्ञापन फिल्मों का सारा व्यापार बेईमानी और सेक्स के बूते पर चलता है।'' इसीलिए वह एक विज्ञापन एजेंसी की प्रबन्धक होने पर इस प्रवृत्ति की रोकथाम के लिए निर्देशक और मालिक को लताड़ती है। ''वह अश्लीलता का आश्रय लेकर उत्पाद को बेचने के विरुद्ध है, अपनी एजेंसी को वह 'चकला' नहीं बनाना चाहती।''

उपन्यास की दूसरी प्रमुख पात्र नीता के जीवन की त्रासदी यह है कि वह निर्बाध मुक्त व्यक्तित्व के विकास के नाम पर अपना शोषण करवा रही है। नीता इस शोषण को पुरुष की दासता से मुक्ति, स्वच्छन्द, निर्बाध और आत्मविश्वास का साधन मानती है। उसे इस बात का अहसासस नहीं कि विज्ञापन कला की आड़ में उसकी देह का ही नहीं, उसके समूचे व्यक्तित्व का ही सौदा हो रहा है। उसकी स्थिति रेगिस्तान में भटकती हुई हिरनी जैसी है। बीबी बच्चों वाले सुधीर के साथ इस भ्रम में रहती है कि ''पति–पत्नी के शताब्दियों की दासता के जीवन से मुक्त होकर सहज स्त्री–पुरुष के रूप में रहा जा सकता है, बिना शोषित हुए या किए।'' लेकिन यह भी छलावा ही सिद्ध होता है। नारी–स्वतंत्रता के नाम पर स्त्रियों के अविवेकपूर्ण, उच्छृंखल व्यवहार छलावा ही सिद्ध होता है। नारी–स्वतंत्रता के नाम पर स्त्रियों के अविवेकपूर्ण, उच्छृंखल व्यवहार तथा पुरुषों द्वारा उनकी इस विवशता का जो शोषण होता है, इस उपन्यास में उसका बड़ा ही यथार्थ और प्रभावशाली चित्र नीता के रूप में मिलता है। अंकिता के माध्यम से लेखिका ने कहना चाहा है कि धैर्य, विवेक, साहस के साथ अत्याचारों का विरोध करते हुए पुरुष के असह्य अहंकार और दुष्टता से टकराते हुए अपनी राह बनाना भी सम्भव है, यद्यपि सरल नहीं है।

उपन्यास के अन्त में सुधांशु प्रायश्चित करते हुए अंकिता से उसे अपनाने को कहता है तो वह उसे बहुत की मार्मिक उत्तर देती है ''सुधांशु जी, औरत बोनसाई का पौधा नहीं है, जब जी चाहा, उसकी जड़ें काटकर उसे वापस गमले में रोप दिया। वह बौना बनाए रखने की इस साजिश को अस्वीकार भी करती है।'' इसे साजिश न भी माना जाए तो भी 'जब चाहा ठुकरा दिया, जब चाह सहला दिया' पुरुष की इस मनमानी का विरोध तो होना ही चाहिए। अंकिता स्त्री–पुरुष की समान साझेदारी की पक्षधर है, इस दृष्टि से इस अस्वीकृति का औचित्य है। ''यदि घर में नहीं तो घर से निकलकर आत्मनिर्भर हो जाने के विकल्पों को खोजना चाहिए।'' इस प्रकार 'एक जमीन अपनी' उपन्यास भाषा भाव वैशिष्ट्य एवं नारी स्वतन्त्रता का सहज चित्रण कर रहा है।

(3) गिलिगडु

यह चित्रा जी का तीसरा उपन्यास है। इसमें जीवन संध्या की कातर कथा अर्थात् दो वृद्धों की कथा का सांगोपांग वर्णन हुआ है। इसमें उन्होंने दो वृद्धों के मनोविज्ञान को आधार बनाकर नई पीढ़ी द्वारा उनके प्रति होने वाले दुर्व्यवहार का चित्रण किया गया है, जो लेखिका के व्यापक और प्रौढ़ अनुभव विश्व का प्रमाण है। 'गिलिगडु' दो वृद्धों की कथा है, जो सैर के समय प्रातः अनायास मिलते हैं और एक–दूसरे में अपनी संवेदना का स्वरूप का प्रतिबिम्ब ढूँढते हुए आत्मीयता का तरल संस्पर्श पाकर अंतरंग मित्र बन जाते हैं। साथ–साथ दिल्ली–दर्शन,

खरीदारी, रेस्तरों में डिनर, सैर के अतिरिक्त उनकी साझी जिन्दगी में शामिल हो जाने वाले वे कुछ अविस्मरणीय पल हैं, जिनके साथ अपने–अपने राज खोलती भावुक तरलताएँ जुड़ी हैं। इतना होते हुए भी दोनों की दुनिया बिल्कुल अलग है।

कानपुर से सेवानिवृत्त इंजीनियर बाबू जसवंत सिंह अपनी पत्नी और दोस्त के निधन के बाद बिल्कुल अकेले हो जाते हैं। इस अकेलेपन की बीमारी से छुटकारा पाने के लिए डॉक्टर की सलाह मानकर वे दिल्ली में अपने बेटे नरेन्द्र के पास आकर रहले लगे हैं। यहाँ आकर उन्हें पता चलता है कि बेटे नरेन्द्र के मन में उनके प्रति कोई आदर का भाव नहीं है। कुछ हैं तो ग्रंथि बनी ढेर सारी वे कटुताएँ जो जब–तब पिता के कठोर अनुशासन भरे अतीत का स्मरण दिलाकर उन्हें क्रूर व्यक्ति के कटघरे में खींच लाती हैं, परन्तु उन सुविधाओं के लिए कृ तज्ञ नहीं हैं जिन्हें जुटाने में बाबू जसवंत सिंह ने अपना शौक और जवानी गला दी। बहू सुनयना के मन में अपने ससुर के प्रति कोई आत्मीयता नहीं है, कुछ है तो लोभ है, जो मुझे सास के गहनों और ससुर की सम्पत्ति हड़पने की आकांक्षा, जिसने उसे अपने ससुर के साथ रहने के लिए विवश किया है। लेकिन उसी सुनयना ने ऐसी गूँगी स्थितियाँ पैदा की हैं, जहाँ संवाद के लिए कोई गुंजाइश नहीं है। आत्मकेन्द्रित बच्चों को बाबू जसवंत सिंह कोई दोष देना नहीं चाहते। माता–पिता की महत्त्वाकांक्षा, भोगवादी संस्कृति और कम्प्यूटरजनित तकनीकी विकास में उलझी नई पीढ़ी ने जब स्वयं अपनी छोटी–छोटी जिंदगियों में कोई मानवीय स्पर्श महसूस नहीं किया है, तो उनकी भावी पीढ़ी भला कैसे कर पाएगी। किन्हीं अमूर्त भयावह लक्ष्यों की ओर दौड़ती अभिशप्त नई पीढ़ी जिसे ''बुद्धि–विकास की आड़ में बड़ी खुबसूरती से. . . संवेदना–च्युत किया जा रहा है– इतना कि बच्चे कभी परिवार में लौट ही न सकें, न कभी अपना परिवार गढ़ सकें।'' ऐसे बंजर और अनात्मीय वातावरण में अपनी तिरस्कृत उपस्थिति बाबू जसवंत सिंह को इस कदर भारी लगने लगती है कि वे स्वयं अपने अस्तित्व और उपयोगिता को लेकर शंकित हो उठते हैं – ''बाबू जसवंत सिंह! तुमने अगर नरेन्द्र की अम्मा की भाँति पकवान बनाने में दक्षता हासिल कर ली होती तो निश्चय ही बहू सुनयना के लिए तुम्हारी उपयोगिता होती।

बूढ़ा ठेलुआ उसके लिए किस काम का जो खाने–हगने के अलावा कुछ और कर नहीं सकता।'' या आत्मदया के शिकार कि ''इस घर में एक नहीं दो कुत्ते हैं–एक टॉमी और दूसरा अवकाश प्राप्त सिविल इंजीनियर जसवंतसिंह! टॉमी की स्थिति निःसंदेह उसकी बनिस्बत मजबूत है। उसकी इच्छा–अनिच्छा की परवाह में बिछा रहता है पूरा घर। उनके लिए किसी को बिछे रहना जरूरी नहीं लगता। टॉमी अच्छी नस्ल का कुत्ता है। सोसाइटी में उनके घर का रुतबा बढ़ाता है। उनके चलते उनका रुतबा कलंकित हुआ।'' इसके ठीक विपरीत हैं रिटायर्ड कर्नल विष्णु नारायण स्वामी; जिनका जीवन मंत्र है– ''लिव लाइक शेर . . . .अपनी तरह से। अपनी शर्तो पर।'' कर्नल स्वमी बाबू जसवंत सिंह के हितैषी होने के बावजूद उनके नपुंसक हाहाकार से क्षुब्ध हो सांत्वना देने के बजाय उल्टे उन्हें ही आड़े हाथों लेते हैं– ''सच तो यह है कि दोस्त, आपको दुःख आढ़ने–बिछाने की आदत पड़ गई है। साधारण बात प्रहार हो उठती हैं दरअसल यह कुछ और नहीं है मिस्टर सिंह, बूढ़ों की शासन न कर पाने की कुंठा है।'' इस कुंठा से उन्हें मुक्त करने हेतु कर्नल स्वामी जसवंत सिंह का एक पिता से भी अधिक ख्याल रखते हैं। उन्हें जॉगिंग के लिए जूते खरीद देने से लेकर अपने साथ सिनेमा और शराब पीने–पिलाने और उनकी हर कामनापूरी करने के लिए बिछे–से रहते हैं। बाबू जसवंत सिंह की तरह वे अपने परिवार में आत्मदया का शिकार नहीं हैं बल्कि प्रतिदिन वह अपने साथी को अपने परिवार के ऐसे किस्से बताते रहते हैं, जिसके केन्द्र में वे स्वयं होते हैं। बात चाहे गिलिगडु अर्थात् उनकी पोतियों–कुमुदिनी–कात्यायनी की हो या बहू माधवी, अनुश्री की या फिर बेटे श्रीनारायण की। उनकी बातों को सुनकर ऐसा लगता है कि घर में उनके बिना पत्ता भी नहीं हिलता हो, लेकिन बारह दिनों तक बिना बताए घूमने के लिए न आने के कारण उनसे मिलने के लिए उत्कंठित बाबू जसवंत सिंह जब तेरहवें दिन उनसे मिलने उनके घर पहुँचते हैं तब वहाँ उनके पड़ोसी से उनके बारे में जानकर उनके पैरों तले की जमीन खिसक जाती है। कर्नल स्वामी का तो बारह दिन पहले ही सीढ़ियों से उतरते समय दिल का दौरा पड़ने से निधन हो गया था। उनके परिवार के बारे में पूछने पर जो उन्हें सुनने को मिला, उससे उनकी आँखों के आगे अंधेरा–सा छा गया। वे स्वप्न में भी सोच नहीं सकते थे कि हरदम दूसरों के लिए प्रेरणास्रोत बने रहने वाले कर्नल स्वामी के जीवन की इतनी बड़ी त्रासदी हो सकती है। कर्नल स्वामी अपने जिस बेटे श्रीनारायण की हरदम प्रशंसा करते रहते थे, वास्तव में उसी बेटे ने पैसों के लालच में उनकी पिटाई की थी और जिसे रोकने के लिए पड़ोसियों को पुलिस की मदद लेनी पड़ी थी। अपनी जिस नृत्यांगना बहू अनुश्री की प्रशंसा में उनकी जबान थकती नहीं थी, वास्तव में वह अपनी डेढ़ साल की जुड़वाँ

बेटियों को छोड़कर अपने नृत्यगुरु के घर जा बैठी थी। अपनी जिन पोतियों गिलिगडु अर्थात् कुमुदिनी–कात्यायनी की प्यार भरी शरारतों का वे हरदम बखान करते रहते थे, वास्तव में उन्हें हैदराबाद के होस्टल में भेजा गया है और उनसे मिलने के लिए कर्नल को बिना किसी रिश्तेदार को खबर किए चोरी–छिपे जाना पड़ता था। उनके जीवन पर पड़ोसी मिसिज श्रीवास्तव की टिप्पणी ''ऐसी कसाई औलादों से तो आदमी निपूता भला। हमें इस बात का कोई गम नहीं कि हमारी कोई औलाद नहीं।'' कर्नल स्वामी के जवान की सारी दास्तान बयान करती है।

कर्नल स्वामी के घर से अपने घर लौटते हुए वे कानपुर लौट जाने का निश्चय करते हैं तथा यह भी निर्णय करते हैं कि वे अपनी वसीयत बदलकर कानपुर की सम्पत्ति सुनगुनिया के नाम कर देंगे। यही नहीं वसीयत में अपने दाह संस्कार का अधिकार भी वे अपने बेटे नरेन्द्र को न देकर सुनगुनिया के बेटे अभिषेक आसरे को देंगे। यह सब सोचकर वे सुनगुनिया को कानपुर फोन करके कहते हैं कि दोपहर का खाना वह बनाकर रखे। शताब्दी से वे कानपुर पहुँच रहे हैं।

इसके शीर्षक पर विचार करें तो उपन्यास में कहा गया है, मलयालम में एक शब्द है– 'किलिकुलू' जिसका अर्थ है चिड़ियाँ। 'गिलिगडु' किलिकुलू का हिन्दीकरण है। अपने कलेवर में प्रसतुत उपन्यास चित्रा जी के अन्य उपन्यासों की तुलना में छोटा है किन्तु अपने इस एक सौ चवालीस पृष्ठों के उपन्यास में लेखिका ने वृद्धों की परिस्थितियों और जीवन शैली से जुड़ी उस ज्वलन्त समस्या को विषय बनाया है, जिससे आज के महानगरीय जीवन में हम सब किसी न किसी रूप में जूझ रहे हैं। इस प्रकार इस उपन्यास में जीवन संध्या एवं वृद्धावस्था की मनोदशा का यथार्थ चित्रण हुआ है।

(घ) कहानी (संग्रह)

कहानी लेखन परम्परा अत्यधिक प्राचीन है। चित्रा मुद्गल ने अपनी साहित्यिक लेखनी का आरम्भ कहानी से किया था। आपने कहानियाँ विविध विषयों को लेकर लिखी हैं। आपको कहानी लेखन में अत्यधिक सफलता प्राप्त हुयी है। आपकी कहानियों का परिचय इस प्रकार है–

भूख– महानगरों में झोपड़पट्टी में बेकारी की दशा में रहने वाले अपनी जिन्दगी के साथ क्या–क्या समझौते कर सकते हैं, इसकी अकल्पनीय दास्तान है। इसमें लक्ष्मा जीविका का कोई और साधन न पाकर अपना छोटा बच्चा छोटू को एक भिखारिन को दो रुपया किराया और बच्चे के खाने पीने का ध्यान रखने के वादे पर तब तक देने के लिए तैयार हो जाती है, जब तक उसे कोई काम नहीं मिलता। पर भिखारिन छोटू को न कुछ खिलाती है, न पिलाती है। घर में भी ठीक से खाने को न मिलने के कारण छोटू की मौत हो जाती है। यह कहानी पाठक के अन्तर्मन को बींधती चली जाती है। इसमें लक्ष्मी की विवशता लज्जित तथा स्तब्ध कराने वाली है।

फातिमाबाई कोठे पर ही नहीं रहती– 'फातिमाबाई कोठे पर ही नहीं रहती' कहानी अपने बुद्धिजीवी तथा सभ्य होने की मानसिकता के कारण एक लड़की मदद न करने के परिणामस्वरूप उसके वेश्या बन जाने की कहानी है। इसमें लेखिका ने कहना चाहा है कि फातिमाबाई कोठे पर ही नहीं रहती बल्कि हर उस व्यक्ति में मौजूद होती है, जो अपनी झूठी प्रतिष्ठा के नकाब के कारण किसी मुसीबत की मारी स्त्री की मदद करने से हिचकता है।

चेहरे–'चेहरे' कहानी में चित्रा जी ने हमारी सामाजिक व्यवस्था पर ही प्रहार किया है। इसमें अर्थ और शरीर के शोषण सन्दर्भ में नारी शोषण के खिलाफ आज की व्यवस्था के प्रति भिखारियों द्वारा उठाई गई आवाज का चित्रण है। इन भिखारियों के शोषण में रेलवे के बड़े बाबू से लेकर पुलिस के सिपाही तक सभी शामिल हैं। अतः कहानी में यह संदेश महत्त्वपूर्ण है कि सुरक्षा की लड़ाई उनसे पहले इनसे लड़नी होगी, ये जो भीतर दुबके बैठे हैं।

ब्लेड– 'ब्लेड' कहानी आज के युग में शोषण के कारण शोषितों के बदलते जीवनमूल्यों से पनपती बेईमानी, भ्रष्टाचार, गिरती नैतिकता, हताशा तथा असहाय स्थिति को उजागर करती है। इसमें ड्राइवर रामखिलावन अपने मालिक से अपनी बेटी के एक्सीडेंट के इलाज के लिए कुछ रुपए माँगता है, परन्तु मालिक के कान पर जू तक नहीं रेंगती। इसलिए अंत में वह मालिक की गाड़ी की सीट पर ब्लेड चलाकर मरम्मत के बहाने कमीशन खाता है।

अपने अपने गिरेबान– 'अपने अपने गिरेबान' कहानी में समाज का वह उच्च वर्ग चित्रित है, जिसे अत्यधिक मॉड कहा जा सकता है। इसमें पत्नी बदलना भी एक शौकीया और क्लब का खेल है। चित्रा जी ने इसमें

पाश्चात्य संस्कृति के अंधानुकरण तथा भारतीय उच्च वर्ग में बढ़ती हुई घिनौनी क्लब संस्कृति पर तीखा व्यंग्य किया है।

इस हमाम में— 'इस हमाम में' मध्यवर्गीय परिवार में जी रही नारी की घुटन की कहानी है। इसमें निम्नवर्गीय स्त्री के विद्रोही जीवन के साथ कहीं पर मध्यवर्गीय स्त्री के दमित, चहारदीवारी में कैद जीवन की तुलना की गई है। कहानी में लेखिका ने इस बात पर बल दिया है कि निम्नवर्ग हो या मध्यवर्ग, हर स्तर पर स्त्री पर अत्याचार होते हैं। निम्नवर्ग में इन अत्याचारों का स्वरूप मारपीट, आर्थिक अभाव का है तो मध्यवर्ग में यह मानसिक यातनाओं का है। इस दृष्टि से चित्रा जी का कथन बड़ा ही सूचक है कि आदमी और जगह बदल लेने से जिन्दगी थोड़े ही बदल जाती है।

होना सम्पादक की पत्नी एक लेखिका का— 'होना सम्पादक की पत्नी एक लेखिका का' में लेखिका ने अपने साहित्य क्षेत्र में भोगे अपने उन निजी अनुभवों को कहानी की शक्ल में प्रस्तुत किया है जब उनके पति श्री अवध ानारायण मुद्गल 'सारिका' के सम्पादक थे।

जरिया— 'जरिया' कहानी व्यावसायिक क्षेत्र की मक्कार प्रवृत्ति को उजागर करती है। इसमें विवेक बत्तरा नामक रंगकर्मी एक लेखिका से उनकी कहानी पर टेलीफिल्म बनाने की बात कहकर एक महीना उनके घर में मुफ्त की दावत उड़ाता है और अन्त में उसे निराशा की गर्त में धकेलकर चला जाता है। इस कहानी द्वारा चित्राजी ने साहित्यकारों के साथ किये जाने वाले छल—कपट का पर्दाफाश करने का प्रयास किया है।

(ब) अपनी वापसीः चित्रा जी की कहानी 'अपनी वापसी' में छः कहानियाँ संकलित हुयी हैं —

अपनी वापसी— चित्रा जी की यह 'अपनी वापसी' कहानी का नामकरण का आधार रहा है। संग्रह में संकलित सभी कहानियों में मनुष्य जीवन के विविध आयामों को उद्घाटित करती हुई सामाजिक परम्पराओं एवं रूढ़ियों पर तीक्ष्ण प्रहार करती हैं। 'अपनी वापसी' कहानी में ढलती उम्र, उतरती और क्षीण होती जाने वाली शारीरिक शक्ति के कारण परेशान शकुन प्रौढावस्था की विशिष्ट समस्या से पीड़ित है। अपने पति से उपेक्षा, सुन्दर और युवा लड़की के प्रति सूक्ष्म सा डाह, पिता और पुत्री के बीच मुक्त मित्रवत्— सम्बन्धों से उत्पन्न निरर्थक किन्तु सहलाने वाला सूक्ष्म संदेह, अपनी असमर्थता का बोध और सबके बीच उत्पन्न बढ़ता मानसिक तथा शारीरिक अस्वास्थ्य, शैथिल्य अवसाद और आत्मकेन्द्रिता को चित्रा जी ने बड़ी कलात्मकता से चित्रित किया है।

दरमियान— 'दरमियान' कहानी में दफ्तर में काम करने वाली मध्यवर्गीय नारियों की पीड़ा को चित्रा जी ने खास दफ्तरी परिवेश के ठोस सन्दर्भ के बीच उपस्थित किया है। इस कहानी की नायिका आकांक्षा अपनी नौकरी और बच्ची के बीच समान भाव से बंधी है। एक दिन मासिक धर्म के अचानक शुरू हो जाने के कारण वह शिशु विकास केन्द्र में अपनी बच्ची मिनी को लेने कुछ देरी से पहुँचती है और अपेक्षा के विपरीत दृश्य वहाँ देखती है कि बच्ची ने अपनी माँ की अवशता को समझ स्थिति से समझौता कर लिया है और वह माँ की रट लगाने के बजाय खेल में अपना मन लगा रही है। आकांक्षा को लगता है कि मिनी के स्थिति के साथ समझौते के कारण जैसे उसका महत्त्व, उसका नारी होने का, माँ होने का सुख—अधिकार छीना गया है।

गर्दी— गर्दी' समकालीन परिस्थितियों में पुरानी पीढ़ी की सनातन विचारधारा से चिपके रहने की कहानी है। इसमें नायक अपने मृत मित्र उमेश की पत्नी राजी और उसके दो बच्चों के साथ उसके रहने, उनका सहारा बनने का एक साहसी निर्णय लेता है। परन्तु माँ द्वारा अपनी बीमारी का झूठा तार देकर उसे गाँव बुलाया जाता है और अन्त में बूढ़े पिता के सिर पर जबरदस्ती उसका हाथ रखवाकर कसम खिलवाई थी कि वह वहाँ पहुँचकर अलग कमरा ले लेगा और उस औरत से कोई सम्बन्ध नहीं रखेगा। यदि वह ऐसा नहीं करता है तो वह समझेगी कि चीन के युद्ध में मारे गए उसके बड़े भाई की तरह वह भी उनके लिए नहीं रहा है।

लिफाफा— 'लिफाफा' एक बेरोजगार युवक के अपने घर में उपेक्षा और उसके मुकाबले नौकरीपेशा बहन के परिवार में सुविधाभोगी स्थिति की कहानी है। यह बेरोजगार युवक अशोक अपनी कमाऊ बहन अनु की तुलना में तब तक लांछित, उपेक्षित होता रहता है, जब तक कि वह नौकरी के अनुबन्ध की कमाई के रुपयों का लिफाफा माँ—बाप के हाथों में ला नहीं रखता।

शून्य— 'शून्य' एक त्रिकोणात्मक कहानी है, जिसमें सरला—राकेश की पत्नी, राकेश को बेला के लिए छोड़कर अपने शून्य के साथ जीती रहती है। पति से अलग होकर वह अपने पुत्र दीपू को लेकर अकेले रहती है, लेकिन जब एक दुर्घटना में बेला माँ बनने की सारी संभावनाएँ खो चुकी है, तब राकेश पुरुष होने के अपने पुराने तर्क

द्वारा दीपू को वापस ले जाना चाहता है। कहानी सरला के इस फैसले के साथ समाप्त हो जाती है कि चाहे उसे कानूनी अदालत में लड़ना ही क्यों न पड़े परन्तु वह दीपू को अपने से अलग नहीं करेगी।

मोर्चे पर— 'मोर्चे पर' कहानी में रिन्नी के पति सुदीप को लड़ाई में गुमशुदा मानकर अन्ततः मृत मान लिया गया है लेकिन बच्चे—राजू और बिट्टी सुदीप से इतने घुल—मिल गए थे कि उन्हें उसकी मौत के बारे में बताना उसके लिए अत्यन्त कठिन है। उनके पिता नहीं रहे इस अहसास से अपने बच्चों को भरसक बचाने की कोशिश करते हुए रिन्नी पूरी जिन्दगी गुजारने का निश्चय करती है। परन्तु बच्चों पर उनके पिता की स्मृतियों की छाया इतनी सघन है कि कुछ ही दिनों में रिन्नी जान जाती है कि इस मोर्चे पर टिक पाना इतना मुश्किल है।

निष्कर्ष

चित्रा मुद्गल का रचना संसार अत्यधिक समृद्धिशाली रहा है। उनके साहित्य के परिप्रेक्ष्य में कहा जा सकता है कि उनका व्यक्तित्व बहुमुखी प्रतिभा से सम्पन्न है। उन्होंने अपने जीवन में काफी यात्राएँ की हैं, कई स्थानों पर घूम चुकी हैं, अतः अनुभवों का विशाल भंडार उनके पास है। जिस परिवेश ने उन्हें इस पड़ाव तक पहुँचाया है, उसी परिवेश ने उन्हें स्वाभिमान, बुराई के प्रति विद्रोह, कमजोरी के प्रति सहानुभूति आदि कई गुण प्रदान किए हैं। अनुभवों की सामग्री पास होने के कारण उनके साहित्य में कल्पना की उड़ान कम और यथार्थ की ठोस जमीन अधिक है। परिणामस्वरूप उनके साहित्य का परिवेश वास्तव होकर उभरता है और पात्र हमारे आस—पास के देखे—पहचाने लगते हैं। उनके अनुभवों का दायरा इतना विस्तृत है कि महल से लेकर झोपड़ी तक और गाँव से लेकर शहर तक की जिन्दगी का समग्र चित्रण उनके साहित्य में देखा जा सकता है। उनके कथा साहित्य में विविधता के रंगों के दर्शन होते हैं। चित्रा जी की लेखनी को उपन्यास, कहानी तथा लघुकथा इन तीनों विधाओं पर सफलतापूर्वक अधिकार प्राप्त है। अपने लेखन को महिलापन से बचाते हुए उन्होंने अपने उपन्यास तथा कहानियों में वर्गीय सीमाओं का अतिक्रमण कर निम्न वर्ग के पक्षधर रचनाकार के रूप में अपनी पहचान बनाई है। फलस्वरूप उनका साहित्य महानगरीय तथा ग्रामीण अहसासों का सजीव साहित्य बन गया है। महानगरों में पनप रही झोपड़पट्टियों तथा ग्रामों में पनप रही गरीबी, अशिक्षा, शोषण, अंधविश्वास आदि समस्याओं के चित्रण में चित्रा जी की मजबूत पकड़ है। साथ ही घर, परिवार तथा अपने आस—पास की जिन्दगी से संलग्न सभी छोटी—मोटी आशा—आकांक्षाओं को वहन करने वाले पात्रों की सृष्टि उनकी साहित्यिक विशेषता है। आजकल सामान्यतः हर महिला लेखिका के साहित्य पर स्त्रीवादी साहित्य होने का ठप्पा लगाया जाता है, मानों उन्होंने विषय का विभाजन ही कर लिया हो कि हम केवल स्त्रियों के जीवन पर ही साहित्य रचेंगे, लेकिन चित्रा जी का साहित्य इस ठप्पे से अछूता है। इसका कारण यह है कि उनका साहित्य न स्त्री—केन्द्री है, न पुरुष—केन्द्री, बल्कि वह तो मानव—केन्द्री है। उनकी समस्त रचनाएँ मानवीय संवेदनाओं, सम्बन्धों, रिश्तों, जन—चेतना जागृति, महिला सबलीकरण एवं साक्षरता, सामाजिक न्याय, अभिजात्य एवं सामंतवादी वर्ग के दमन, शोषण, भ्रष्टाचार के विरुद्ध संघर्ष का प्रतिनिधित्व करती हैं। उनके साहित्य में समाज के कमजोर वर्गों, दलित वर्गों तथा नारी वर्ग के प्रति जो संवेदना एवं सहानुभूति मिलती है, वह प्रशंसनीय है। उसमें ग्रामीण—शहरी यह भेद नहीं है। अमीर, गरीब, नौकरीपेशा, व्यवसायी, किसान, मजदूर, बेरोजगार, महलवासी, झोपड़पट्टी निवासी सभी उनके साहित्य के विषय हैं। उनके कथा साहित्य में विषयों, पात्रों, समस्याओं की इतनी विविधता है, कि जिसके कई आयाम निरूपित किए जा सकते हैं।

Author's Declaration:

I/We, the author(s)/co-author(s), declare that the entire content, views, analysis, and conclusions of this article are solely my/our own. I/We take full responsibility, individually and collectively, for any errors, omissions, ethical misconduct, copyright violations, plagiarism, defamation, misrepresentation, or any legal consequences arising now or in the future. The publisher, editors, and reviewers shall not be held responsible or liable in any way for any legal, ethical, financial, or reputational claims related to this article. All responsibility rests solely with the author(s)/co-author(s), jointly and severally. I/We further affirm that there is no conflict of interest financial, personal, academic, or professional regarding the subject, findings, or publication of this article.

सन्दर्भ सूची

1. चित्रा मुद्गल से दिल्ली स्थिति उनके निवास स्थान पर साक्षात्कार, दि. 27 जून, 2004

2. चित्रा मुद्‌गल, 'नवभारत', दिल्ली, 18 दिसम्बर, 1994
3. चित्रा मुद्‌गल, 'मेरी रचना प्रक्रिया' जगदंबा बाबू गाँव आ रहे हैं – पृ0सं0 10 से उद्‌धृत
4. पुष्पपाल सिंह, शीराजा, अगस्त, सितम्बर, 1992, पृ0सं0 7 से उद्‌धृत
5. चित्रा मुद्‌गल, एक जमीन अपनी, पृ0सं0 16 से उद्‌धृत
6. चित्रा मुद्‌गल, एक जमीन अपनी, पृ0सं0 38 से उद्‌धृत
7. डॉ. कृष्णचन्द्र गुप्त, 'प्रकर', जून, 1991, पृ0सं0 38 से उद्‌धृत
8. चित्रा मुद्‌गल, गिलिगडु, पृ0सं0 34 से उद्‌धृत
9. जिनावर – चित्रा मुद्‌गल, पृ0सं0 65 से उद्‌धृत
10. ग्यारह लम्बी कहानियाँ– चित्रा मुद्‌गल, पृ0सं0 44 से उद्‌धृत
11. बयान – चित्रा मुद्‌गल, पृ0सं0 33 से उद्‌धृत
12. वागर्थ – सुरेन्द्र तिवारी, जून, 2006, पृ0सं0 93 से उद्‌धृत
13. उपन्यास में शिल्प एवं संवेदना– डॉ0 गोपालराम, बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी पटना–1973
14. हिन्दी उपन्यासों का शिल्पगत विकास– डॉ0 उषा सक्सेना, शोध साहित्य प्रकाशन, इलाहाबाद–1972
15. हिन्दी साहित्य का सुबोध इतिहास– गुलाबराय, साहित्यरत्न भंडार, सिविल लाइन्स, इलाहाबाद, 1942

Cite this Article

"जिज्ञांशु पाठक; प्रो0 (डॉ0) शैलेन्द्र कुमार राव", "चित्रा मृद्‌गल का रचना संसार', ResearchPro International Multidisciplinary Journal (RPIMJ), ISSN: 3048-7331 (Online), Volume:1, Issue:2, October-December 2025.

Journal URL- https://www.researchprojournal.com/

DOI- 10.70650/rpimj.2025v1i2000010